प्राचीन काल में आन्तरिक व्यापार

डॉ. विजय कुमार

गुप्तयुगीन आंतरिक व्यापार 'श्रेष्ठि', 'सार्थवाह', 'कुलिक' और निगम के माध्यम से संगठित और व्यवस्थित होता था। विभिन्न वस्तुएँ क्रय और विक्रय को जाती थी तथा एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाई जाती थी। ऐसे व्यापारी जो अपनी वस्तुओ को घोड़ो, बैलो या अन्य पशुओं अथवा रथो पर लादकर समूह में एक स्थान से दूसरे स्थान पर पैदल जाते–आते थे तथा क्रय–विक्रय करते थे, 'सार्थ' के नाम से विख्यात थे। कभी–कभी उन्हें 'सांगात्रिक' भी कहा जाता था। उन व्यापारियों के नेता को 'सार्थवाह' के नाम से अभिहित किया गया था, जो व्यापारियों के समूह को नेतृत्व प्रदान करता था। 'सार्थ' में सम्मिलित होकर चलनेवाले व्यापारियों के बीच पारस्परिक मतैक्य होता था तथा हानि–लाभ के लिए सभी समान रूप से भागीदार होते थे और नियमों के अनुसार आबद्ध रहते थे। सार्थ में पाँच प्रकार के लोग होते थे– (1) मंडी–सार्थ (व्यापारिक सामान और माल लादकर सम्मिलित होने वाले व्यापारी) (2) 'वह्लिका' (घोड़े, बैल, ऊँट आदि वाहन), (3) भारवाह (माल ढ़ोनेवाले लोग), (4) औदारिका (आजीविका के लिए एक स्थान से दूसरे स्थान जानेवाले लोग) और (5) कार्पटिक (साधु और भिक्षु)। उस युग में बाजार को 'विपणि' की संज्ञा दी गई थी, जहाँ क्रय–विक्रय के लिए अनेकानेक वस्तुएँ इकट्ठी होती थी। लोहे को तपाकर अनेक वस्तुएँ बनाई जाती थी, जिनकी माँग समाज में बराबर हुआ करती थी। अनेक प्रकार के अस्त्र भी बिकते थे। इन अस्त्रो का उल्लेख प्रयाग प्रशस्ति जैसे अनेक अभिलेखों और साहित्यों में हुआ है। क्रय करने के लिए 'निष्क्रय' शब्द का व्यवहार किया जाता था। पण्यवीथी (सड़क) के दोनो ओर दूकाने रहा करती थी, जिनमें समाज के उपयोग की विविध वस्तुएँ बिका करती थी। 'अमरकोश' में सड़क के दोनों ओर की दूकानों का उल्लेख हुआ है। भीटा के उत्खनन में गुप्तयुगीन जो अवशेष मिले है, उनमें सड़के है, जिनके दोनों ओर दुकानें है। रधुवंश में विवृत है कि अयोध्या के बाजारों के लोग विभिन्न प्रकार की वस्तुओं का क्रय–विक्रय करते थे और तत्पश्चात् नावों से सरयू के उस पार जाते थे अथवा नदी के किनारे–किनारे जाते थे।